वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

मातृभूमि-वन्दना

अथर्ववेद, काण्डसं. 12 सूक्त सं. 1

गताङ्क से आगे

जिस भूमि पर हम वास करते हैं, उसके प्रति हम यदि अपना कर्तव्य निभायें तो हमारी मातृभूमि हमें माता की तरह सब कुछ देती हुई हमारा पोषण करती है। अथर्ववेद का पृथ्वी-सूक्त हमें उन कर्तव्यों को पूरा करने का आदेश देता है। पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा अनूदित यह पृथ्वीसूक्त धर्मायण की अंक संख्या 93 से क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है। (अगले अंक में समाप्य)

अश्व इव रजो दुधुवे वि तान् जनान् य आक्षियन् पृथिवीं यादजायत।
मन्द्राग्रेत्वरी भुवनस्य गोपा वनस्पतीनां गृभिरोषधीनाम्॥57॥

युद्ध में विजयी हो जहाँपर सेना के घोड़ों के चलने से धूलि उड़कर मनुष्य के चित्तों को प्रसन्न करती है। अथवा जब किसी विशेष कारण के लिए मनु।य अपना संघ कर एकत्र होते हैं, तब उस संघ से जो फल स्वरूप में एक विलक्षण शक्ति उत्पन्न होती है, वह शक्ति सबको आनन्द देनेवाली, सब देश का संरक्षण करनेवाली और औषध आदि भक्ष्य पदार्थ देने वाली होती है। इसलिए मातृभूमि के सम्पूर्ण भक्त सदैव ध्यान रखें॥57॥

यद्वदामि मधुमत्तद्वदामि यदीक्षे तद्वनन्ति मा।
त्विषीमान् अस्मि जूतिमान् अवान्यान् हन्मि दोधतः॥58॥

हम जो कुछ भी भाषण करेंगे वह सब हमारी मातृभूमि के लिए हितकारी होगा, जोकुछ हम आँखों से देखेंगे वह सब भी मातृबूमि के लिए सहायक होगा, इसी प्रकार हमारे सब काम मातृभूमि ही के अर्पण होंगे। हम तेजस्वी और बुद्धिमान हों, जो हमारे शत्रु हमारी मातृभूमि का दोहन करेंगे हम उनका नाश करेंगे॥58॥

शन्तिवा सुरभिः स्योना कीलालोध्नी पयस्वती।
भूमिरधि ब्रवीतु मे पृथिवी पयसा सह॥59॥

शान्ति, सुख, अन्न, पानी आदि देनेवाली हमारी मातृभूमि हमें भोग के पदार्थ और ऐश्वर्य देने वाली हो इस तरह और हमारी रक्षा करती रहे॥59॥

यामन्वैच्छद्धविषा विश्वकर्मान्तरर्णवे रजसि प्रविष्टाम्।
भुजिष्यं पात्रं निहितं गुहा यदाविर्भोगे अभवन् मातृमद्भ्यः॥60॥

जहाँ सब तरह के उद्योग करने वाले कुशल पुरुष मातृभूमि की सेवा करने के लिए कटिबद्ध होते हैं वहाँ मातृभूमि के गुप्त स्थान में रखा हुआ तथा परोसा हुआ थाल (जो केवल भक्तों के लिए ही है) आकर उन्के सामने प्रकट होता है। अर्थात् उनके उपभोग के सारे पदार्थ उन्हें सहज ही मिल सकते हैं॥60॥

क्रमशः (अगले अंक में समाप्य)